ऋषि प्रसाद

वर्ष : ६ १ अगस्त १९९५ अंक : ३२

३ रूपये

नंद घेर आनन्द भयो जय कनैया लाल की...

ऋषि प्रसाद

वर्ष : ६
अंक : ३२
९ अगस्त १९९५
सम्पादक : के. आर. पटेल
मूल्य : तीन रूपये

सदस्यता शुल्क
भारत, नेपाल व भूटान में

वार्षिक	: द्विमासिक संस्करण हेतु	: रू. 30/-
	मासिक संस्करण हेतु	: रू. 40/-
आजीवन	: द्विमासिक संस्करण हेतु	: रू. 300/-
	मासिक संस्करण हेतु	: रू. 400/-

विदेशों में

वार्षिक	: द्विमासिक संस्करण हेतु	: US $ 18
	मासिक संस्करण हेतु	: US $ 24
आजीवन	: द्विमासिक संस्करण हेतु	: US $ 180
	मासिक संस्करण हेतु	: US $ 240

कार्यालय
'ऋषि प्रसाद'
श्री योग वेदान्त सेवा समिति
संत श्री आसारामजी आश्रम
साबरमती, अहमदाबाद-३८० ००५
फोन : (०७९) ७४८६३१०, ७४८६७०२.

प्रकाशक और मुद्रक : के. आर. पटेल
श्री योग वेदान्त सेवा समिति,
संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा,
साबरमती, अहमदाबाद-३८० ००५ ने
विनय प्रिन्टिंग प्रेस, मीठाखली एवं भार्गवी प्रिन्टर्स,
राणीप, अहमदाबाद में छपाकर प्रकाशित किया ।

हे मेरे सद्‌गुरुदेव !

जब-जब दुनिया की उलझनों और आकर्षणों से मैं गिर जाऊँ, तब-तब आप मेरी रक्षा करना । हे व्यापक चैतन्य में रमण करनेवाले आत्मवेत्ता ! ब्रह्मवेत्ता गुरुदेव ! हम आपको धागे की राखी नहीं, परन्तु श्रद्धा तथा प्रार्थना की राखी भेज रहे हैं कि जब-जब हम उलझ जाएँ तब तब हमारे अन्तर को परमात्मा की ओर, अपनी प्रेमाभक्ति व हरिभक्ति की ओर आकर्षित करना, आनंदित करना...

इस अंक में...

१. पूज्य बापू का गुरुपूनम-संदेश २
२. रक्षाबंधन ३
३. जन्माष्टमी संदेश ५
४. गुरुभक्तियोग ६
५. 'परिप्रश्नेन...' ७
६. श्री अरविंद की निश्चिंतता ११
७. आपके पत्र १३
८. शरीर स्वास्थ्य प्रश्नोत्तरी १४
वर्षा ऋतु में आहार-विहार १५
९. संस्था समाचार १६

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्रव्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक एवं स्थायी सदस्य क्रमांक अवश्य बतायें ।

पूज्य बापू का गुरुपूनम-संदेश

इन्दौर तथा अहमदाबाद आश्रम में गुरुपूर्णिमा पर्व के अवसर पर लाखों शिष्यों के बीच दिये गये सुप्रवचन के मुख्यांश

गुरुपूजन की परम्परा भारत में आदिकाल से चली आ रही है। यह व्यासपूर्णिमा भारतीय संस्कृति की ही देन है। भगवान श्रीराम भी अपने गुरु श्री वशिष्ठजी महाराज के चरण धोते हैं एवं रामजी के साथ सीताजी वह चरणामृत लेकर धन्यता का अनुभव करती है। श्रीकृष्ण भी गुरुपूजन करते हैं।...तो क्या श्रीराम से बड़ी अक्ल है आज के आदमियों की ? श्रीकृष्ण से भी बड़ा सामर्थ्य और माधुर्य है क्या आज के आदमियों के पास ?

गुरु-शिष्य का संबंध वर्षों से चला आ रहा है लेकिन १००० वर्ष की गुलामी ने गुरुपरम्परा की रीढ़ तोड़ दी। अंग्रेजों की कूटनीति ने इसमें हस्तक्षेप किया और इसकी महिमा एवं गरिमा से लोगों को दूर किया, उसकी आलोचना की। फलतः हमारे भोले-भाले भारतवासी अपनी परम्परा को भूलकर उस्ताद एवं शागिर्द में उलझ गये और यहाँ से भी अब Teacher (sir) (टीचर, सर)और Student (स्टूडेन्ट) की परम्परा में आ गये। नैतिक पतन भी इतना हो गया कि आज के स्टूडेन्ट कभी-कभी टीचर की पिटाई तक कर देते हैं। टीचर भी ऐसा पढ़ाते हैं कि स्टूडेन्ट को ट्यूशन फीस देकर पढ़ना पड़ता है।

लेकिन गुरु-शिष्य परम्परा यह है कि गुरुदेव ने जो कुछ कमाया है उसे स्नेह से वे शिष्य के हृदय में उड़ेलने की ताक में रहते हैं तथा शिष्य ने जो कुछ भी कमाया है उसे वह गुरुचरणों में अर्पित करने की ताक में रहता है। इसे कहते हैं निःस्वार्थ संबंध, निष्काम संबंध, प्रेम संबंध। यह हृदय को पावन करता है।

जहाँ Teacher-Student परम्परा है वहाँ स्वार्थ है और जहाँ गुरु-शिष्य परम्परा है वहाँ प्रेम है। भौतिक उन्नति करनी है तब भी प्रेम और निःस्वार्थता आवश्यक है तथा आध्यात्मिक उन्नति भी निष्कामता व प्रेम के बिना पूर्ण नहीं होती। प्रेम व निष्कामता से रस पैदा होता है तथा एक-दूसरे के हृदय को आदमी समझ सकता है लेकिन जो स्वार्थी हैं वे स्वार्थ में अन्धे होने के कारण 'दूसरों का चाहे जो कुछ हो लेकिन मैं सुखी रहूँ' इस भावना के कारण बहुत दुःखी हैं।

भारत में आज भी हजारों-लाखों लोग सुखी हैं तो वे इस गुरुपरम्परा की ही देन है। तिलक, गाँधी, सुभाषचंद्र बोस और सरदार पटेल जैसे वीर पुरुष तथा भारत के अन्य महान क्रांतिकारी एवं स्वतंत्रता संग्राम के सेनानियों की गहराई में देखा जावे तो वे भी गुरुपरम्परा की ही देन है। यदि गुरुपरम्परा न होती तो ऐसे निःस्वार्थी नेता नहीं होते और ऐसे निःस्वार्थी नेता नहीं होते तो हमारा देश अभी भी अंग्रेजों का गुलाम होता।

सद्गुरु की पूजा अर्थात् ध्येय की पूजा, अपनी माँग की पूजा है। मनुष्य जाति में जब तक ईश्वरीय माँग बनी रहेगी, असली ध्येय बना रहेगा तब तक सद्गुरुओं की पूजा होती रहेगी। जब तक एक भी सद्गुरु धरती पर है और एक भी सत्शिष्य है तब तक धर्म यहाँ फिर-फिर से पनप सकता है।

गुरुपूर्णिमा ज्ञानपूर्णिमा है। इसे ब्रह्मपूर्णिमा भी कहते हैं तथा देवपूर्णिमा भी कहते हैं क्योंकि यह उस आत्मदेव से मिलाने की पूनम है। व्यासजी ने कृपा करके व्यवस्था की हमारी बिखरी हुई चेतना की व्यवस्थित धारा बनाने की, इसलिये इसे व्यासपूर्णिमा भी कहते हैं।

> ***गुरु-शिष्य परम्परा यह है कि गुरुदेव ने जो कुछ कमाया है उसे स्नेह से वे शिष्य के हृदय में उड़ेलने की ताक में रहते हैं तथा शिष्य ने जो कुछ भी कमाया है उसे वह गुरुचरणों में अर्पित करने की ताक में रहता है।***

(शेष पृष्ठ ५ पर...)

-पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

व्यासपूर्णिमा के बाद आनेवाली पूर्णिमा सुरक्षा पूर्णिमा के नाम से भी जानी जाती है । इसे रक्षाबन्धन अथवा राखीपूनम भी कहा जाता है । इस पर्व से सामाजिक सुव्यवस्था होती है ।

आप जितने सीमित दायरे में रहते हैं उतना ही आपका जीवन संकीर्ण और आपके कर्त्तव्य तुच्छ होते हैं लेकिन जैसे-जैसे आपके चित्त की वृत्तियाँ व्यापक होती हैं, आपके कर्त्तव्याधिकार भी विशाल होते जाते हैं ।

'मैं भाई हूँ और बहन की रक्षा करना मेरा कर्त्तव्य है' अथवा 'मैं बहन हूँ और भाई के लिये शुभकामना करना मेरा कर्त्तव्य है', यह भावना तो ठीक है लेकिन पड़ोस की बहन की रक्षा करना भी तुम्हारा कर्त्तव्य है, यह बात समझ लोगे तो तुम्हारी विशालता बढ़ेगी ।

रक्षाबन्धन में राखी का छोटा-सा, कच्चा धागा भी पक्के पुरुषार्थ की याद दिलाता है ।

पड़ोस के भाई की दृष्टि बहन पर पड़े तो उसके चित्त में बहन को प्रणाम करने का भाव जगे, ऐसा आचरण करने का बहन संकल्प करे तो पड़ोस के भाई की सेवा हो जाएगी और भाई भी अपनी बहन के साथ-साथ पड़ोस की बहन के लिये भी अपनी दृष्टि पवित्र करने का संकल्प करे । इस प्रकार परस्पर के संकल्प पावन करने का दिन है रक्षाबंधन ।

रक्षाबन्धन में राखी का छोटा-सा, कच्चा धागा भी पक्के पुरुषार्थ की याद दिलाता है । जिसने हमें राखी बांधी है अथवा जिससे राखी बंधवाई है, मात्र वही संरक्षण और सुरक्षा के योग्य है ऐसा नहीं, अपितु जो भी दलित हैं, पतित हैं, फिर चाहे वे धन से हों, दान से हों, भक्ति से हों या ज्ञान से हों, उनकी यथायोग्य सेवा व सुरक्षा करने का संकल्प-दिवस भी आज ही है ।

यदि तुम डॉक्टर हो तो किसी गरीब, नि:सहाय और आर्थिक स्थिति से विपन्न की निष्काम भाव से सेवा करो तथा उसके बिस्तर के नीचे पाँच-पच्चीस रूपये छुपाकर रख दो ताकि उससे वह कुछ फल खरीद सके । यदि तुम व्यापारी हो तो तुम्हारे संपर्क में आने वाले तुमसे छोटे व्यक्तियों को सहायक बनने का संकल्प भी तुम आज से कर सकते हो ।

इसके अतिरिक्त भी कई साधन हैं जो तुमसे रक्षा की अभिलाषा रखते हैं, जैसे- आँख व्यर्थ का न देखे, कान व्यर्थ का न सुने, नासिका व्यर्थ के उत्तेजना बढ़ानेवाले परफ्यूम न सूंघे, जिह्वा व्यर्थ की चर्चा या परनिन्दा में संलग्न न रहे । 'मैं अपनी इन इन्द्रियों की भी रक्षा करूँगा' ऐसा पावन संकल्प करने का दिन भी रक्षाबन्धन है ।

यह शरीर भी तुमसे रक्षा माँगता है और मन भी तुमसे रक्षा चाहता है । व्यर्थ का खा-खाकर शरीर का वजन न बढ़ायें और व्यर्थ की भूखमरी से शरीर का शोषण न करें । युक्ताहार-विहार करके शरीर को तन्दुरुस्त, मन को प्रसन्न और बुद्धि को सूक्ष्म, सूक्ष्मतर, सूक्ष्मतम करने का संकल्प करें । जितनी तुम अपने मन, बुद्धि और शरीर की रक्षा कर सकोगे, उतनी ही तुम दूसरे लोगों की रक्षा कर सकोगे ।

जिस समाज में भक्ति और प्रेम तो है लेकिन उपनिषदों का ज्ञान नहीं है, ऐसे समाज को उपनिषदों के ज्ञानामृत से तृप्त करने से उसकी सुरक्षा हो सकेगी ।

तन, मन, धन से निर्बल जन ही सुरक्षा के पात्र नहीं अपितु हम भी सुरक्षा के पात्र हैं । हम अन्तर्यामी प्रभु से विनती करें कि : ''हमारे हृदय की इतनी रक्षा अवश्य करना कि उसमें परोपकार की कर्त्तव्य भावना सदा बनी रहे । कर्त्ता व भोक्तापन के भाव हममें प्रवेश

न करें । बुरे कार्यों से बचकर हम सदा अच्छे कार्यों में संलग्न रहें तथा कर्तृत्वभाव हममें कभी विकसित न हो । 'मैं बुरा काम नहीं करता' यह भाव भी न रहे, लेकिन यह 'मैं' जहाँ से उत्पन्न होता है, उस असली चैतन्य आत्मा को जानकर सदा-सदा के लिये अपने मुक्त स्वभाव का अनुभव कर लें, ऐसी हमारी दृष्टि की सुरक्षा करें ।''

लौकिक रक्षाबन्धन तो भले हुआ और होना ही चाहिये किन्तु उसके साथ-साथ आध्यात्मिक रक्षा, आत्मपद पाने के प्रयत्नों की रक्षा का भी संकल्प करें । प्रभुप्राप्ति के मार्ग में आने वाली विघ्न-बाधाओं या प्रलोभनों से बचने का दृढ़ संकल्प करें ।

गुरूपदिष्ट मार्ग पर अग्रसर होता साधक कभी सफल होता है तो कभी फिसलता है । कभी संसारी उसे रोकते हैं तो कभी उसके शरीर की नादुरुस्त स्थिति उसे रोकती है। सगे-संबंधी, पुत्र-परिवार उसे साधना के मार्ग में जाने से रोकते हैं, तब साधक अपनी सुरक्षा के लिये प्रार्थना करता है -

दुनिया के हंगामों में
आँख हमारी लग जावे,
उसके पहले ओ मेरे गुरुदेव !
तुम मेरे ख्वाबों में आना,
प्यार भरा पैगाम लिये ॥

अपनी साधना की रक्षा हो, आत्मसाक्षात्कार के मार्ग में आने वाली विघ्न-बाधाओं से अपनी सुरक्षा हो, रक्षाबन्धन के दिन साधक ऐसे संकल्प करते हैं ।

करीब जाने पर जिस तरह समुद्र शीतलता प्रदान करता है, वैसे ही जिनकी कामनाएँ शांत हो गई हैं, जिन्होंने अपने परमात्मतत्त्व में विश्रांति पाई है, ऐसे महापुरुषों के समीप जब हम जाते हैं तो हमें भी आध्यात्मिक आन्दोलन व शीतलता मिलती है । जिन महापुरुषों ने शास्त्र बनाकर आध्यात्मिक शीतलता फैलाई, उनका हम पर ऋण है । कहीं हम कृतघ्न न हो जायें इसलिये अपनी कृतज्ञता व्यक्त करने का तथा अपने जीवन में आनेवाले विघ्नों से सुरक्षा पाने का यह दिन है, इसीलिये इसे सुरक्षा पूर्णिमा भी कह सकते हैं ।

जीवन एक उत्सव है । हजार-हजार बार विघ्न-बाधाएँ, प्रतिकूलताएँ आवे लेकिन भीतर का उत्साह जो नहीं छोड़ता, उसका जीवन उत्सव हो जाता है और अपने जीवन को उत्सव बना लेनेवाले को फिर व्यक्तिगत सुख, चैन और आराम की परवाह नहीं होती । यह प्रकृति का नियम है कि जो वस्तु जैसी है, उसकी सजातीय वस्तु आकर्षित होकर उसके पास आ ही जाती है ।

जिनकी कामनाएँ शांत हो गई हैं, जिन्होंने अपने परमात्म तत्त्व में विश्रांति पाई है, ऐसे महापुरुषों के समीप जब हम जाते हैं तो हमें भी आध्यात्मिक आन्दोलन व शीतलता मिलती है ।

हम परमेश्वर से, अन्तर्यामी ईश्वर से प्रार्थना करें कि 'हमें तुच्छ इच्छाओं और वासनाओं से बचाये रखना । हम तुझे पा लें, ऐसी तीव्र इच्छा हममें जागृत हो । तुम्हारे साक्षात्कार के सिवाय और सब तुच्छ है, ऐसा दृढ़ ज्ञान हमें हो जाए । संसार का जो कुछ भी पाएँगे वह सब फिर संसार में मिल जाएगा, ऐसी हमारी समझ दृढ़ हो जाए ।

अन्य सारी आशा-आकांक्षाएँ क्षीण हो जाय तथा साक्षात्कार करने की हमारी जिज्ञासा जागृत हो, ऐसी दया करना मेरे गुरुदेव ! मेरे प्रभु !! जीवन का दीपक बुझ जावे उसके पहले जिज्ञासा का दीपक जगमगा देना, मेरे गुरुदेव ! चंचल मन के कहने में चलें उसके पहले सद्गुरु और सत्शास्त्र की आज्ञानुसार चलने का हमारा साहस जागृत हो, ऐसी कृपा करना ।'

जीवन एक उत्सव है । हजार-हजार बार विघ्न-बाधाएँ, प्रतिकूलताएँ आवें लेकिन भीतर का उत्साह जो नहीं छोड़ता उसका जीवन उत्सव हो जाता है

सद्गुरु एवं सत्शास्त्रों का कहना है कि अपनी शांत आत्मा का, अमर आत्मा

का तथा अपने निज परमात्मस्वभाव का स्मरण करते जाओ। मेरा आत्मा शांत और आनंदस्वरूप है, यह भाव जगाते जाओ... ।

यह उत्सव हमें एकाग्रता, अनासक्ति और त्याग सिखाता है। एकाग्रता इस तरह होती है : 'भाई को राखी बांधने जाना है... जाना है...' ऐसा सतत भाव एकाग्रता है। राखी बांधते समय बहन भाई को कुछ न कुछ दिये बिना नहीं रह सकती। और कुछ नहीं तो भाई के मुँह में मिठाई रखकर तिलक लगाकर शुभकामनाएँ देती है। भाई भी एक छोटी-सी राखी बंधवाकर मुँह मीठा कर बहन की आजीवन रक्षार्थ वचनबद्ध हो जाता है, यह अनासक्ति है।

रक्षाबन्धन मन-इन्द्रियों की रक्षा करने के संकल्प का उत्सव भी है तथा जन्म-जन्मान्तर के भूखे प्यासे इस जीव को आत्मज्ञान का अमृत पिलाने के संकल्प करने का दिन भी है।

रक्षाबन्धन अर्थात् शुद्ध प्रेम का बंधन, पराक्रम तथा प्रेम का समन्वय, साहस और संयम का सहयोग, जीवात्मा और परमात्मा की मुलाकात करने का संकल्प... उसका नाम है रक्षाबन्धन महोत्सव।

ब्रह्मज्ञानी गुरुओं के लिये, संतों के लिये शुभकामनाएँ करने का तथा उनकी ओर से शुभ संकेत, शुभकामनाएँ एवं शुभाशिष पाने का यह दिन है और यही है आध्यात्मिक रक्षाबन्धन...

(पृष्ठ १ का शेष...)

स्नेह, समर्पण, शांति, सेवा और सुख है वहाँ धर्म है। जहाँ दो श्रद्धालु शिष्य मिलेंगे वहाँ धर्म का दर्शन होगा और जहाँ दो शुष्क बुद्धि मिलती है वहाँ द्वेष, दुःख, ईर्ष्या, विद्रोह पैदा होता है।

यह गुरुपरम्परा मनुष्य में आत्मबल जगाने में मदद करती है। इहलोक में वास्तविक सुख का रास्ता दिखाती है तथा परलोक में भी परमपद में पहुँचाती है। वे लोग धनभागी हैं जो समाज एवं संतों के बीच सेतु बनने का अवसर पाते हैं।

ॐ शांति... शांति... शांति

-पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

श्रीकृष्ण के जीवन में एक महत्त्वपूर्ण बात झलकती है कि बुझे दीयों को प्रकाश देने का कार्य और उलझे हुए दिलों को सुलझाने का काम तो वे करते ही हैं, साथ ही साथ इन कार्यों में आनेवाले विघ्नों को, फिर चाहे वह मामा कंस हो या पूतना या शकटासुर-धेनुकासुर-अघासुर-बकासुर हो या फिर केशि हो, सबको श्रीकृष्ण किनारे लगा देते हैं।

> *जैसे गोकुल में कंस का राज्य नहीं हो सकता, ऐसे ही तुम्हारी इन्द्रियों के गाँव अर्थात् शरीर में कंस का अर्थात् अहंकार का राज्य न रहे।*

साधक को भी चाहिये कि साधना में या ईश्वरप्राप्ति में मददरूप जो व्यवहार, खान-पान, रंग-ढंग है अथवा जो घड़ी भर के लिये थकान उतारने के काम में आ जाए, उसका उपयोग करते हुए भी अपने लक्ष्य का ही ध्यान रखते हुए वहाँ पहुँचने का तरीका पा लेना चाहिये।

आवश्यक नहीं है कि आप श्रीकृष्ण का अवतार रात्रि को बारह बजे ही मनाओ। श्रीकृष्ण का अवतार तो आप जब चाहो तब मना सकते हो। श्रीकृष्ण के अवतार से अभिप्राय है श्रीकृष्ण का आदर्श, श्रीकृष्ण का संकेत।

हमने 'कृष्ण कन्हैयालाल की जय' कह दी, मक्खन मिश्री बाँट दिया, खा लिया, इतने से ही अवतार का उत्सव मनाने की पूर्णाहुति नहीं होती।

श्रीकृष्ण जैसी मधुरता को और जीवन में तमाम परेशानियों के बीच रहकर भी चित्त की समता को

बनाये रखने का हमारा प्रयत्न होना चाहिये ।

यह जन्माष्टमी अपने प्रेम को प्रकट करने का संदेश देती है । जितना अधिक हम आत्मनिष्ठा में आगे बढ़ते हैं, उतना-उतना हम श्रीकृष्ण का आदर करते हैं और श्रीकृष्ण का अवतार मानते हैं ।

ऐसा नहीं कि रात्रि को जागरण किया और दूसरे दिन सोते रहे... नहीं ।

हमारे नगर में, हमारे आस-पास में जो भाई-बहन हैं, वे भी इसका लाभ लें ऐसी व्यवस्था करनी चाहिये । जिन लोगों को विधर्मी लोग अपने धर्म से च्युत कर रहे हैं, ऐसे लोगों को पुन: गीता के ज्ञान से, श्रीकृष्ण के अमृत से सिंचन करने का हमारा लक्ष्य होना चाहिये ।

जन्माष्टमी पर हम संकल्प करें कि गीता के संदेश को, योग के संदेश को, आत्मज्ञान के अमृत को हम भी पियें तथा जगत में भी इस जगद्गुरु का प्रसाद बांटें ।

कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ।

श्रीकृष्ण का जन्मोत्सव तो तब पूर्ण माना जाएगा, जब हम उनके सिद्धान्तों को समझेंगे तथा उन्हें अपने जीवन में उतारने की कोशिश करेंगे । जैसे गोकुल में कंस का राज्य नहीं हो सकता, ऐसे ही तुम्हारी इन्द्रियों के गाँव अर्थात् शरीर में भी कंस का अर्थात् अहंकार का राज्य न रहे अपितु श्रीकृष्ण की बंसी बजे, प्रेम की बंसी बजे, यही जन्माष्टमी का हेतु है ।

श्रीकृष्ण का जीवन एक समग्र जीवन है । उसमें से आप जो कुछ भी पाना चाहें, पा सकते हैं । उनके जीवन की प्रत्येक घटना, प्रत्येक लीला आपको कुछ न कुछ संदेश अवश्य देती है । आप उसे अपनाकर, उनका अनुसरण कर अवश्य ही वहाँ तक पहुँच सकते हैं, जहाँ श्रीकृष्ण स्वयं हैं । आप श्रीकृष्ण के जीवन को अपना आदर्श बनाकर, उसके अनुसार आचरण कर उस पथ के पथिक बन सकें, यही मेरी हार्दिक शुभकामना है ।

ॐ... ॐ... ॐ...

गुरुभक्तियोग

१. गुरु के उपदेशों में गहरी श्रद्धा रखो । सद्गुरु के स्वभाव और महिमा को स्पष्ट रीति से समझो । गुरु की सेवा करके दिव्य जीवन बिताओ । तभी ईश्वर की जीवन्त मूर्ति के समान सद्गुरु के पवित्र चरणों में सम्पूर्ण आत्मसमर्पण कर सकोगे ।

२. शरीरप्रेम यानी गुरुप्रेम का इन्कार । शिष्य अगर अपने शरीर की अधिक देखभाल करता है तो वह गुरु की सेवा नहीं कर पाता ।

३. गुरु की कृपा तो सदा रहती है । महत्त्वपूर्ण बात यह है कि शिष्य को गुरु के वचनों में श्रद्धा रखना चाहिए और उनके आदेशों का पालन करना चाहिए ।

४. गुरु करना और बाद में उनको धोखा देकर उनका त्याग कर देना इसकी अपेक्षा गुरु नहीं करना और भवाटवी में भटकना बेहतर है ।

५. जो मनुष्य विषयवासना का दास है वह गुरु की सेवा नहीं कर सकता, गुरु को आत्मसमर्पण नहीं कर सकता । फलत: वह संसार के कीचड़ से अपने आपको बचा नहीं सकता ।

६. गुरु में सम्पूर्ण श्रद्धा रखें और अपने आपको पूर्णत: गुरु के शरण में ले जाएँ । वे आपकी निगरानी करेंगे । इससे सब भय, अवरोध एवं कष्ट पूर्णत: नष्ट होंगे ।

७. अपने गुरु की सेवा करने के लिए अपने प्राण एवं शरीर का बलिदान देने की तैयारी रखो, तब वे आपकी आत्मा की सँभाल लेंगे ।

८. गुरु की आज्ञा का उल्लंघन करने से सीधे नरक में पहुँचते हैं । गुरुद्रोही खुद तो डूबता है, अपने कुल भी कलंकित करता है ।

९. गुरुकृपा के बिना आप मानसिक विकारों से मुक्त नहीं हो सकते एवं मोक्ष नहीं पा सकते ।

१०. जो मनुष्य गुरु के चरणकमलों का ध्यान नहीं करते वे आत्मा का घात करनेवाले हैं । वे सचमुच जिन्दे शव के समान कंगले मवाली हैं । वे अति दरिद्र लोग हैं । ऐसे निगुरे लोग बाहर से धनवान दिखते हुए भी आध्यात्मिक जगत में अत्यंत दरिद्र हैं ।

-स्वामी शिवानंदजी

पूज्य गुरुदेव के श्रीचरणों में साधकों द्वारा पूछे गये प्रश्न

साधक : स्वामीजी ! परमात्मप्राप्ति के, तत्त्वज्ञान प्राप्ति के अभिलाषी साधकों को कैसा जीवन जीना चाहिये ?

पू. बापू : जिन्हें इसी जन्म में परमात्मा का साक्षात्कार करना है, उन्हें वशिष्ठजी के मतानुसार दिन के दो भाग कर लेने चाहिये। एक भाग अर्थात् १२ घंटे खाने, सोने इत्यादि के लिये तथा दूसरा भाग (१२ घंटे) ईश्वरप्राप्ति में लगा देना चाहिये ।

१२ घंटे में चार प्रहर होते हैं इनमें से एक प्रहर प्रणव का जप करें, एक प्रहर परमात्मा का ध्यान करें, एक प्रहर योगवाशिष्ठ जैसे महाग्रन्थ का स्वाध्याय करें तथा एक प्रहर सद्गुरु के सेवा कार्यों में संलग्न रहें । आधी अविद्या तो इससे ही कट जाएगी । यहाँ तक पहुँच गये और तीव्र जिज्ञासा हो तो खान-पान के लिये कमाने में समय न गँवायें। आजीविका तो स्वत: मिलेगी ।

शेष १२ घंटों में से छ: घंटे शयन करें और शेष छ: घंटे अपने अन्य कार्यों में लगा दें तो इसी जन्म में तत्त्वज्ञान हो जाएगा ।

साधक : स्वामीजी ! हर किसीका मन भगवान में क्यों नहीं लगता है ?

पू. बापू : हर किसीके पास इतना पुण्य नहीं है, इतनी समझ नहीं है इसलिये हर किसी आदमी का मन भगवान में नहीं लगता लेकिन प्रत्येक का मन देर-सबेर भगवान में लगेगा ही । इस जन्म में नहीं लगा तो ठोकरें खाते-खाते अगले जन्मों में लगेगा लेकिन लगेगा सही, ऐसी ईश्वर की व्यवस्था है ।

ईश्वर के सिवाय कहीं भी मन लगाया तो वहाँ से फिर दु:ख ही मिलता है । इन्सान अन्य सहारे तलाशता है लेकिन जब वे भी छूट जाते हैं तो आखिरी सहारा ढूँढते-ढूँढते ईश्वर के सहारे आना ही पड़ता है फिर चाहे आर्तभाव से आवे, अर्थार्थी भाव से आवे या जिज्ञासु भाव से आवे । उसको आना ही पड़ता है । सीधे-अनसीधे ईश्वर के रास्ते जाने के सिवाय अन्य कोई रास्ता ही नहीं है ।

नान्य पंथा विद्यते अयनाय ।

पूर्व के पाप जोर करते हैं तो ईश्वर में मन नहीं लगता । वासना का जोर होता है, अहंकार का जोर होता है तथा भौतिक वस्तुओं में आस्था होती है इसलिये ईश्वर में मन नहीं लगता तथा उन भौतिक सुखों में जब उपद्रव होते हैं तो मजबूर होकर भी यह स्वीकारना पड़ता है कि इनके अतिरिक्त भी ईश्वर की कोई सत्ता है ।

इन्सान अन्य सहारे तलाशता है लेकिन जब वे भी छूट जाते हैं तो आखिरी सहारा ढूँढते-ढूँढते ईश्वर के सहारे आना ही पड़ता है ।

गजेन्द्र जब अपने परिवार में, अपने सुख में मस्त था तब कुछ नहीं लेकिन जब उसे ग्राह ने पकड़ा और देखा कि अब अपने बल से कुछ नहीं होगा तो सीधा ही शरण में गया. कि 'जो भी कोई सृष्टिकर्त्ता हों, मैं उनकी शरण में हूँ, वे मुझे बचाने की कृपा करें ।' तब उसे भगवान आदिनारायण की कृपा का एहसास हुआ ।

तुलसी पूर्व के पाप से, हरिचर्चा न सुहाए ।
जैसे ज्वर के जोर से, भूख बिदा हो जाए ॥

हर किसी का मन भगवान में नहीं लगता क्योंकि पापवासना का जोर होता है । पापवासना को अनुकूल चीज मिलती है तो मोह होता है एवं प्रतिकूल मिलती है तो द्वेष होता है । मोह और द्वेष से आदमी संसार में फंसता है और परमात्मा से विमुख हो जाता है ।

साधक : हे गुरुदेव ! संसार में सर्वत्र दुःख, अशांति और तनाव क्यों है ?

पू. बापू : दुःख, अशांति और तनाव सर्वत्र नहीं है। जो संसार के रास्ते जाते हैं, उन्हें दुःख, अशांति और तनाव होता है लेकिन जो ज्ञानवानों के दिखलाये मार्ग का अनुसरण करते हैं वे दुःख, अशांति और तनाव के वातावरण में भी सुख, शांति और आनन्द का अनुभव करते हैं।

दुःख और अशांति से पीड़ितों का बहुमत हो सकता है। जो त्रुटि करते हैं वे दुःखी-अशान्त हो सकते हैं किन्तु जो त्रुटियों से पार हो गये हैं, उनके पास दुःख और अशांति नहीं है।

दुःख, अशांति और तनाव का कारण है- बिना ब्रेक की गाड़ी भगाना। हम अपने जीवन की गाड़ी में संयम की ब्रेक खो बैठे हैं, सदाचार की स्टेयरिंग नहीं है, हमारा सोचने का ढंग गलत हो गया। पाश्चात्य प्रभाव से हम इतने आकर्षित हो गये हैं कि हमने भी उनकी ही तरह बाह्य विषय-विकारों में सुख ढूँढने के लिये छलांग लगा दी।

पाश्चात्य प्रभाव से हम इतने आकर्षित हो गये कि हमने भी उनकी ही तरह बाह्य विषय-विकारों में सुख ढूँढने के लिये छलांग लगा दी।

वस्तुओं के उपयोग की जगह उपभोग बढ़ रहा है, इन्द्रियगत सुखों की ओर मानव अधिक आकृष्ट हो रहा है तथा धर्म से दूरियाँ बढ़ रही हैं इसीलिये दुःख, अशांति व तनाव का विस्तार हो रहा है।

धर्म जीवन में अनुशासन, साहस, शक्ति, सदाचार, संयम लाता है जिससे अशांति के स्थान पर शांति, दुःख के स्थान पर शाश्वत सुख तथा तनाव के स्थान पर आनंद की वृद्धि होती है, सर्वत्र सुख, शांति, आनंद व माधुर्य छा जाता है तथा देर-सबेर वह धर्म उपासना में एवं उपासना ज्ञान में परिवर्तित होकर जीवात्मा को परमात्मा का साक्षात्कार करा देता है।

साधक : बापूजी ! जीवन का वास्तविक विकास कैसे हो ?

पू. बापू : आप जिस शरीर को जीवन मानते हैं, वास्तव में वह शरीर आपका जीवन नहीं है, वह तो मुर्दा है क्योंकि वह नित्य मृत्यु की ओर जा रहा है। यह पहले आपके साथ नहीं था, बाद में भी नहीं रहेगा तथा अभी भी प्रतिदिन आपका साथ छोड़ता जा रहा है, शरीर के कण बदलते जा रहे हैं।

आपका वास्तविक जीवन तो जीवनदाता से जुड़ा है। बीजरूप में प्राणीमात्र के पास उस अनंत ब्रह्मांडनायक परमेश्वर की चेतना है, ज्ञान है। वह ज्ञान 'आँख देखती है कि नहीं' उसको भी देख रहा है तथा 'बुद्धि का निर्णय ठीक है कि नहीं' उसे भी देख रहा है। वह ईश्वर का ज्ञानस्वरूप, ईश्वर का सत्स्वरूप और ईश्वर का चेतन स्वरूप, आपसे अभिन्न है और वही वास्तविक में आपका जीवन है।

उसका विकास कैसे हो ? जैसे बीज को विकसित होने के लिये धरती चाहिये, हवा, पानी, खाद व सूर्य का प्रकाश चाहिये ऐसे ही वास्तविक जीवन के विकास के लिये धर्म, उपासना, सत्संग, ज्ञान, श्रद्धा, संयम, सदाचार आदि चाहिये।

तुम जिस शरीर को जीवन मानते हो, वास्तव में वह शरीर तुम्हारा जीवन नहीं है, वह तो मुर्दा है क्योंकि नित्य मृत्यु की ओर जा रहा है।

साधक : गुरु बिना परमात्मा की प्राप्ति नहीं होती है ऐसा सुना जाता है। भगवान तो सबके हैं और जो भी भगवान को पाना चाहे उसे भगवान मिल जाना चाहिये। फिर गुरु क्यों जरूरी हैं ?

पू. बापू : बात तो ठीक है लेकिन जैसे आटा पड़ा हो तो भी हर कोई रोटी नहीं बना सकता क्योंकि रोटी बनाने के लिये आटा गूंथने तथा रोटी बेलने, सेंकने की कला आनी चाहिये और यह कला भी किसी गुरु (माता, बहन या भाभी) से सीखी जाती है तो भगवान को पाने की कला सिखाने के लिये भी

तो कोई गुरु चाहिये ।

सहजो कारज संसार को गुरु बिन होत नाहीं ।
हरि तो गुरु बिन क्या मिले सोच ले मन माहीं ॥

सूर्य तो दिखता है लेकिन 'यह सूर्य है' ऐसा ज्ञान करानेवाला कोई था तभी आप सूर्य को सूर्य के रूप में पहचानते हैं । किसीने बतलाया होगा तभी तो आपने जाना होगा कि 'यह मेरी माँ है, ये मेरे पिता हैं ।'

मनुष्य जीवन में जानने की क्षमता छुपी है इसीलिये बच्चों की जैसे-जैसे समझ निखरती है तो पूछता है कि 'यह क्या है... वह क्या है... ?' माता-पिता बतलाते हैं कि 'यह अमुक वस्तु है... यह स्त्री है... यह पुरुष है ।' जब तक हमें स्त्री-पुरुष का ज्ञान नहीं था, तब तक हम स्त्री को स्त्री और पुरुष को पुरुष नहीं बोल सकते थे । यह ज्ञान भी तो किसीने दिया ही है ना !

जिसका कोई गुरु नहीं वह या तो मुर्ख है या घमंडी है, जिसका सिर कहीं झुकता नहीं है ।

ऐसे ही परमात्मा हमारे साथ है लेकिन अव्यक्त है । वह इन्द्रियों का, आँखों का विषय नहीं है । उपनिषद् कहती है -

यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह ।

वह वाणी का विषय नहीं है । चिड़िया को आप वाणी से बता सकते हो या आँखों से दिखा सकते हो लेकिन भगवान को आप बतला या दिखला नहीं सकते कि 'यह रहा भगवान...।'

जैसे दूध में घी छुपा है ऐसे ही सारे ब्रह्मांड में सच्चिदानंद परमात्मा छुपा है । दूध में घी क्यों नहीं दिखता ? दूध को पहले गर्म करो, दही जमाओ, फिर बिलोओ, मक्खन निकालो और उसे गरम करो तब घी का साक्षात्कार होता है । ऐसे ही इस नश्वर देह एवं बदलनेवाले संसार में भी अबदल और शाश्वत तत्त्व छुपा है । थोड़ा व्रत-नियम का तप करो, फिर थोड़ा जमाओ अर्थात् ध्यान करो और विचार करो कि 'ध्यान करने वाला कौन है ? ...और जिसका ध्यान करते हो उस परमेश्वर का स्वरूप क्या है ?' तत्पश्चात् ज्ञानाग्नि से अपनी वासनाओं तथा कर्मों को जलाकर उस मक्खन में से घी निकालो ।

जहाँ-जहाँ मन जाए वहाँ-वहाँ उसे प्रभु की सत्ता का आभास कराओ ।

ध्यान की एकाग्रता और संयम का जो दही जमाया और मक्खन निकाला, उसे घी बनाने के लिये बाकी की विधि करो तो घी प्रकट हो जाता है । ईश्वर को कोई क्यों नहीं पा सकता है ? जैसे दूध में से घी बिना ज्ञान के नहीं बना सकते, कोई न कोई ज्ञान बतानेवाला चाहिये । थोड़ी-सी रसोई बनाने की कला बतानेवाला कोई अनुभवी गुरु (माता आदि) चाहिये तो फिर परमात्मा का, जीवनदाता का ज्ञान बिना गुरु के कैसे संभव हो सकता है... ?

भगवान शंकर कहते हैं :

गुरु बिनु भव निधि तरइ न कोई ।
जौं बिरंचि संकर सम होई ॥

अखंडानन्दजी सरस्वती लिखते हैं कि 'जिसका कोई गुरु नहीं है, उसका कोई सच्चा हितैषी भी नहीं है ।'

जिसका कोई गुरु नहीं, वह या तो मूर्ख है या घमंडी है, जिसका सिर कहीं झुकता नहीं है । भगवान श्रीराम के भी गुरु थे, श्रीकृष्ण के भी गुरु थे फिर भी पूछते हैं कि गुरु के बिना भगवान क्यों नहीं मिलता ?

अरे, भगवान तो मिला मिलाया है लेकिन गुरु मिलें तब तो इस बात का अनुभव होवे ना ! गुरु बनाये बिना इस प्रकार की यात्रा करना तो मानो 'बिना दही जमाये या बिना क्रीम निकाले घी क्यों नहीं मिलता ?' पूछने के समान है । गुरु की कृपा के बिना भगवान के स्वरूप का अनुभव नहीं होता ।

यदि कोई कहे कि हम गुरु को नहीं मानते । हम तो 'सीताराम-सीताराम' करेंगे... भगवान कृपा करेंगे ।' भगवान सदा कृपा करें- यह भी अच्छा है

किन्तु 'सीताराम-सीताराम' करने से भगवान कृपा करेंगे- यह भी तो किसीसे तुमने सुना होगा ?

'सीता' और 'राम' का अर्थ क्या है ? उनका स्वरूप क्या है ? यह बतानेवाला भी तो कोई गुरु चाहिये... नहीं तो करते रहो 'सीताराम-सीताराम...' कहाँ मना है ? 'सीताराम-सीताराम' करोगे तो देर-सबेर सीताराम की कृपा होगी ही और वे आत्मा होकर प्रेरणा करेंगे कि 'जा, किसी आत्मज्ञानी गुरु की शरण ले ।' मुझे तो अपने साधनाकाल के दौरान अनेकों बार ऐसे अनुभव हुए थे ।

जिस किसीने भी ईमानदारी से भगवान की शरण ली है, वह देर-सबेर ब्रह्मवेत्ता सद्गुरु के सान्निध्य में पहुँचा ही है । सनातन धर्म के पाँच भगवान हैं : सूर्य, गणपति, शिव, विष्णु अथवा इनके अवतार एवं भगवती जगदंबा । इन पाँच देवों में से किसी भी देव को इष्ट मानकर यदि किसीने सच्चाई से भजन, पूजन या सेवा की है और उसकी पूजा फली है तो उन देवों की कृपा से उसकी अन्तरात्मा में प्रेरणा होगी कि सद्गुरु के पास जाना चाहिये । यदि किसीने नानक, कबीर जैसे महापुरुषों को मन ही मन गुरु मानकर भजन किया तब वे गुरु भी कृपा करेंगे और हृदय में किसी जीवित ब्रह्मज्ञानी गुरु का नाम स्फुरित करायेंगे कि 'जाओ ! अमुक गुरु के पास जाओ ।'

ईश्वर के लिये भी तुम्हारा प्रेम कमजोर है और चलने का अभ्यास भी नहीं है, इसीलिये विघ्न आते और दिखते हैं ।

अत: परमात्मा की प्राप्ति के लिये गुरु की अनिवार्यता से इन्कार नहीं किया जा सकता है ।

साधक : गुरुदेव ! मंत्रजाप करते समय मन इधर-उधर भटकता हो तो क्या करना चाहिये ?

पू. बापू : मंत्रजाप के समय मन भटकता है इसका कारण यह है कि मन में भगवान से भी अधिक किसी अन्य वस्तु के गहरे संस्कार पड़े हैं, जिसमें सत्यबुद्धि व प्रीति होने के कारण वह हमें मिले इस भावना से मन भटकता है । यह पुरानी आदत सबमें घर कर बैठी है । इसे बदलना है तो प्रभु को अपना मानकर उससे स्नेह करें, जोर-जोर से नामोच्चार या मंत्रोच्चार करें, पंजों के बल थोड़ा कूदें अथवा कुछ गहरे श्वास लें और छोड़ें...श्वास लें और छोड़ें... तो इससे मन के भटकाव में फर्क पड़ेगा ।

मंत्रजाप करते समय मन भटकने लगे तो कभी-कभी जप छोड़कर मन को देखो और बोलो-

'जा बेटा ! कहाँ-कहाँ भटकता है...' जहाँ-जहाँ मन जाए, वहाँ-वहाँ उसे प्रभु की सत्ता का आभास कराओ ।

मान लो मन एक घंटे में हजार बार भटकता है । आप यह अभ्यास करेंगे तो कुछ ही दिनों में आप देखेंगे कि उसका भटकना ९५० बार हो गया... फिर ९००... ८००... ७००... ६००... ५०० बार हो गया । एक दिन में ही तो मन एकाग्र नहीं होगा, उसकी भटकान बन्द नहीं होगी लेकिन धीरे-धीरे अभ्यास करते रहें तो भटकान कम होती जाएगी ।

दृढ़ संकल्प करो कि 'मन भटके तो भटके, मुझे तो नियम करना है ।' गुरुदेव की तस्वीर की ओर, इष्टदेव की ओर निहारकर त्राटक करो, प्रार्थना करो, गुरुदेव के सत्संग का विचार करो । मन को भटकना है तो आत्मज्ञान के विचार में भटकाओ ।'भटकना ही है तो फिर जंगल में क्यों जाएँ, नन्दनवन में ही चलते हैं' ऐसा करके मन को आत्मविचार में लगा दो । 'सत्संग में यह सुना था, वह सुना था-' इसमें मन को भटकाओ ।

मन जब ज्ञान में भटकेगा तो अज्ञान की भटकान मिट जाएगी और ज्ञान तथा अज्ञान का जो साक्षी है उस परमात्मा में विश्रांति मिल जाएगी । एक बार मन को हरि का चस्का लग जाए तो उसकी भटकान कम हो जाएगी इसीलिये 'ध्यान योग शिविर' भरनेवाले साधकों को मन की एकाग्रता-वृद्धि में काफी लाभ होता है ।

भवसागर को पार करने के लिए गुरु के सत्संग जैसी और कोई सुरक्षित नौका नहीं है । - स्वामी शिवानंदजी

श्रीअरविन्द की निश्चिंतता

श्री अरविन्द घोष ने अपने जीवनकाल में व्रत लिये थे : भारत माँ को आजाद कराना, आजादी के लिये प्राणों की बलि तक दे देना तथा यदि ईश्वर है, सत्य है तो उसका दर्शन करना ।

उनकी यह मान्यता थी कि भगवान केवल अहिंसा के अथवा केवल हिंसा के दायरे में नहीं हैं । भगवान सर्वत्र हैं तो हिंसा-अहिंसा सब उसीमें है । अंग्रेजों को भारत से भगाने के लिये यदि अहिंसा व्रत की आवश्यकता पड़ी तो उसका उपयोग करेंगे और हिंसा की आवश्यकता पड़ी तो उसका भी उपयोग करेंगे लेकिन भारतमाता को आजाद कराके रहेंगे ऐसी उन्होंने शपथ ली थी ।

अंग्रेजों को भारत से भगाने के लिये यदि अहिंसा व्रत की आवश्यकता पड़ी तो उसका उपयोग करेंगे, हिंसा की आवश्यकता पड़ी तो उसका भी उपयोग करेंगे लेकिन भारतमाता को आजाद कराके रहेंगे ।

श्रीकृष्ण उनके इष्टदेव थे और गीता के प्रति उनकी अटूट श्रद्धा थी । विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार के लिये तो अरविन्द ने अहिंसा का मार्ग स्वीकार किया था लेकिन जो युवक थे, जिनमें प्राणबल था और गरम खून था, जो भारतमाता के लिये प्राण देने को तत्पर थे, ऐसे लोगों को साथ लेकर अंग्रेजों को भगाने के लिये हिंसात्मक प्रवृत्तियाँ आरंभ की । उनका कार्य था बम बनाना, उपद्रव करना तथा ऐसी मुसीबतें पैदा करना कि भारतवासियों को भून डालनेवाले शोषक, हत्यारे, जुल्मी, अंग्रेजों की नाक में दम आ जाए । केवल 'सर-सर' कह कर गिड़गिड़ाने से ये मानेंगे नहीं, ऐसा समझकर युवाओं को अरविंद ने यह मार्ग बतलाया था ।

जो शोषक है उसके आगे आप विनम्र हो जाओगे तो वह आपका शोषण करेगा । जो उदार आत्मा हैं, सज्जन हैं, संत हैं उनके आगे आपकी विनम्रता की कद्र होगी ।

उनके भाई ने जब प्रार्थना की कि मुझे भी भारतमाता की आजादी की लड़ाई में कुछ काम सौंपा जावे तब अरविन्द घोष ने उन्हें एक हाथ में तलवार और दूसरे हाथ में भगवद्गीता देकर शपथ दिलाई कि 'जान भी जाए तो दे देंगे लेकिन रहस्य किसीको नहीं बताएँगें । भारतमाता को आजाद कराकर रहेंगे ।'

युवकों ने अपना कार्य आरंभ किया । कुछ बम बनाते, कुछ विद्रोह फैलाते, कुछ अंग्रेजों की सम्पत्ति नष्ट करते । इससे अंग्रेजों की नाक में दम आ गया ।

देहाध्यासी आदमी अहिंसा से नहीं मानता, वह भय से काबू में रहता है । सज्जन पुरुष के आगे आप नम्र हो जाओ तो आपकी नम्रता पर वे प्रसन्न हो जाएँगे लेकिन दुर्जन के आगे आप नम्र बनोगे तो आपकी नम्रता का वह दुरुपयोग करेगा । जो शोषक है उसके आगे आप विनम्र हो जाओगे तो वह आपका शोषण करेगा, आपको बुद्धू मानेगा लेकिन जो उदार आत्मा हैं, सज्जन हैं, संत हैं उनके आगे आपकी विनम्रता की कद्र होगी ।

श्री अरविन्द घोष की हिंसात्मक प्रवृत्तियों के अपराध में अनेक युवा पकड़े गये, अनेकों को फाँसी लगी, सैकड़ों को आजीवन कारावास की तथा कइयों को काले पानी की सजा दी गई । उन सबका मूल अरविन्द घोष को माना और उन्हें पकड़कर जेल में बन्द कर दिया । ब्रिटिश शासन यह चाहता था कि कैसे भी करके उन्हें अपराधी साबित करके शीघ्र ही फांसी लगवा दी जाय ।

उस समय देश में चारों ओर भारत की स्वाधीनता का संग्राम जोर-शोर से चल रहा था । हर शख्स में गुलामी की बेड़ियाँ काटने का अतुलित जोश भरा था । वतन पर मर मिटनेवाले कदम आगे बढ़ाते ही जा रहे थे ।

एक बम काण्ड में ब्रिटिश अधिकारियों ने श्री अरविन्द को मुख्य आरोपी मानकर गिरफ्तार कर कैद में डाल दिया । उक्त अपराध की सुनवाई के लिये कुछ गोरे अधिकारी व सिपाही हथकड़ियाँ सहित श्री अरविन्द को न्यायालय में लाये । अपने लाड़ले नेता को देखने के लिये न्यायालय के प्रांगण में दर्शकों, क्रांतिकारियों व समर्थकों की इतनी भीड़ जमा थी कि पैर रखने को जगह न थी ।

कैद में श्री अरविन्द को अपना समय भगवद् ध्यान में गुजारने का मौका मिलता था ।

एकांतवासो लघुभोजनादौ
मौनं निराशा करणावरोध: ।
मुनेरसो संयमनं षडेते
चित्तप्रसादं जनयन्ति शीघ्रम् ॥

एकांतवास, अल्पाहार, मौन, आशारहित जीवन तथा इन्द्रियों के संयम से चित्त के प्रसाद की प्राप्ति होती है । अन्त:करण विशुद्ध होता है तथा आत्मतत्त्व प्रकट होने की संभावना बढ़ती है ।

ब्रिटिश शासन येन-केन-प्रकारेण श्री अरविन्द को आरोपी सिद्ध कर फाँसी लगवाने के लिये कृतनिश्चयी था । पेशी के दिन जब उन्हें न्यायालय लाया गया तब वे श्रीकृष्ण के चिन्तन में तन्मय थे । वे जब न्यायालय में पहुँचे तब उन्होंने देखा कि न्यायालय के चँवर में तथा चँवर डुलाने के लिये नियुक्त कैदी में, दोनों में श्रीकृष्ण मुस्कुरा रहे हैं । न्यायालय के न्यायाधीश में भी श्रीकृष्ण बैठे हैं । फिर नजरें घुमाकर देखा कि सरकारी वकील में भी वही कन्हैया बैठा है तथा अपने वकील में एवं देखनेवाले सभी दर्शकों में भी वही बैठा है ।

अरविन्द को आभास हुआ कि वे श्रीकृष्ण मुस्कुराते हुए कह रहे हैं कि 'जब सबमें मैं हूँ और तू मेरा है तो फिर चिन्ता तेरी कैसी ? फाँसी तेरी कैसी ?'

जो भगवान की शरण जाता है और फिर भी चिन्ता करता है तो वह सचमुच में भगवान की शरण नहीं है ।

जो भगवान की शरण जाता है और फिर भी बच्ची के विवाह की चिन्ता करता है तो वह सचमुच में भगवान की शरण नहीं है । जो भगवान की शरण जाता है और बुढ़ापे की चिन्ता करता है वह भी भगवान की शरण नहीं है । तुम भगवान के हो गये तो बुढ़ापा तुम्हारा कैसे ? पुण्य और पाप तुम्हारा कैसे ? यश और अपयश तुम्हारा कैसे ? तुम भगवान के शरण गये तो फिर सुख और दु:ख तुम्हारा कैसे ? तुम्हारा तो केवल भगवान ही भगवान है । इस बात को तुम ठीक समझ लो तो हर हालत में मुस्कुराकर जी सकते हो ।

अनेक रूपों में बसे हुए श्रीकृष्ण की शरण लेने से श्री अरविन्द निर्भय हो गये । ब्रिटिश शासन ने उन पर आरोप सिद्ध कर फाँसी की सजा देने के अनेक प्रयत्न किये लेकिन उन्हें दोषी न ठहरा सका । श्री अरविन्द बाइज्जत निर्दोष रिहा किये गये ।

केवल श्री अरविन्द घोष के जीवन में ऐसा घटित हुआ है, इसलिये आपको यह बात मान लेनी चाहिये, ऐसा नहीं है । आप भी अपने जीवन में इसका प्रत्यक्ष अनुभव कर सकते हैं । जब भी आप भयभीत होवें या संसार का आकर्षण सतावे तो इसे माया मात्र समझकर अन्तर्यामी राम की शरण चले जाना, तब तुम उस रसस्वरूप अन्तर्यामी के रस में सराबोर हो जाओगे । फिर बाहर के रस या बाहर की परिस्थिति का कोई प्रभाव तुम्हारे चित्त पर नहीं पड़ेगा । 'हरि ॐ तत्सत्... और सब गपशप...' यह बात दिल में जम जाएगी ।

भगवान श्रीकृष्ण ने भी कहा है

अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशयस्थित: ।
अहमादिश्च मध्यं च भूतानामन्त एव च ॥

'हे अर्जुन ! मैं सब भूतों के हृदय में स्थित सबका आत्मा हूँ तथा सम्पूर्ण भूतों का आदि, मध्य और अन्त भी मैं ही हूँ ।' (गीता : १०.२०)

प्रतीक्षित इच्छा 'ऋषि प्रसाद' के गुरुपूर्णिमा विशेषांक १९९५ में प्रकाशित सूचना ने पूर्ण कर दी । मुझे अत्यधिक प्रसन्नता हुई ।

'श्रीरामचरितमानस' में संत तुलसीदासजी ने लिखा है :

जो इच्छा करिहो मन माहीं ।
राम कृपा कछु दुर्लभ नाहीं ॥

'ऋषि प्रसाद' की निरन्तर सफलता एवं जन-जन में इसका व्यापक प्रचार-प्रसार हो, ऐसी मैं बारम्बार शुभकामनाएँ एवं ईश्वर से प्रार्थनाएँ करता हूँ ।

- हरगोविन्दसिंह ब्रह्मवंशी 'साहित्य भूषण'
लार्डगंज (कछियाना) जबलपुर, (म.प्र.)

मासिक प्रकाशन : बधाई हो...

'ऋषि प्रसाद' के मासिक प्रकाशन आरम्भ पर हार्दिक बधाइयाँ । चिरकाल से प्रतीक्षा थी कि 'ऋषि प्रसाद' का मासिक प्रकाशन आरम्भ हो क्योंकि इसमें पूज्य बापू के सत्संग-प्रवचनों का वह दिव्यामृत भरा रहता है कि जितना जितना पीवें, प्यास बढ़ती ही चली जाती है ।

'ऋषि प्रसाद' से आज समाज में भारतीय संस्कृति एवं सनातन धर्म के उच्चादर्श पुष्पित, पल्लवित एवं सुरभित हो रहे हैं, आज के अशांत युग में भी इस पत्रिका के द्वारा मानवजाति में सत्य की समझ, शांति का विस्तार, प्रेम का संचार एवं जीवन विकास के मूल सिद्धान्तों का प्रसारण हो रहा है । संत श्री आसारामजी आश्रम का यह एक अति स्तुत्य एवं पूजनीय प्रयास है ।

'ऋषि प्रसाद' पत्रिका प्रतिकूलताओं में भी निश्चिन्तता से जीवनयापन करने की कला सिखाती है, दुःखों से लड़ना सिखाती है, समता की प्रेरणा व तत्त्वज्ञान का आनन्द प्रदान करती है । मैं तो चाहूँगा कि प्रत्येक भारतीय परिवार इस अनूठी पत्रिका का लाभ लेवे ।

- अमृतलाल मारु 'पत्रकार'
दसाई (धार) म.प्र.

❀

श्रद्धेय सम्पादकजी,

मेरी हार्दिक अभिलाषा थी कि 'ऋषि प्रसाद' का द्विमासिक से मासिक प्रकाशन आरंभ हो और वह चिर

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से अनुरोध

१. जो साधक भाई रू. २५०/- जमा कराके 'ऋषि प्रसाद' के द्विमासिक संस्करण के आजीवन सदस्य बने हुए हैं, वे चाहें तो अतिरिक्त रू. १५०/- जमा करवाकर इसका मासिक अंक भी प्राप्त कर सकते हैं । कृपया शुल्क भेजते समय अपना सदस्यता क्रमांक अवश्य लिखकर भेजें ।

२. रू. २५/- जमा करवाकर वार्षिक सदस्य बने पाठक भाइयों से मासिक संस्करण हेतु अतिरिक्त शुल्क नहीं स्वीकारा जाएगा । वार्षिक सदस्यता की अवधि समाप्त होने पर ही अथवा नये सिरे से वे मासिक संस्करण के सदस्य बन सकते हैं ।

३. यदि आपके पते में पिनकोड नहीं दिया गया है अथवा गलत लिखा है तो कृपया पते के लेबल में सही पिनकोड लिखकर भेज देवें । सही पिनकोड पर पत्रिका शीघ्र पहुँचती है ।

४. 'ऋषि प्रसाद' के दुर्लभ कुछ पुराने अंक (अंक क्रमांक ५ एवं २० से ३० तक गुजराती भाषा में एवं अंक क्रमांक २६ से ३० तक हिन्दी भाषा में) सीमित मात्रा में उपलब्ध हैं । जिनको आवश्यकता हो वे रू. ५/- प्रति अंक की दर से मनीआर्डर भेजकर अपनी प्रति आज ही सुरक्षित करवा सकते हैं । पुराने अंक स्टाक होने तक ही उपलब्ध कराये जाएँगे ।

प्रश्न : मेरी दृष्टि कमजोर है । पढ़ते समय अक्षर धुंधले दिखते हैं । मेरे पिताजी भी मोतियाबिन्द रोग से पीड़ित हैं । कृपया योग्य उपचार बताने का कष्ट करें ।

उत्तर : सौ ग्राम गुलाबजल में एक चने के दाने बराबर फिटकरी सेंककर डालें तथा प्रतिदिन रात्रि में सोते समय चार-चार बूँद यह गुलाबजल आँखों में डालकर आँखों की पुतलियाँ इधर-उधर घुमावें । यह अनुभूत प्रयोग है । इससे नजर के चश्में भी उतरने लगते हैं तथा मोतियाबिन्द भी कट जाता है व नेत्रज्योति में वृद्धि होती है । साथ ही पाँव के तलवे में आधा घंटा तक रोज रात में गाय के घी की मालिश करें । लाभ न होने तक यह प्रयोग चालू ही रखें ।

नेत्रज्योति की वृद्धि के लिये जलनेति भी एक अद्भुत उपचार है । इसके नियमित प्रयोग से अन्य अनेकों रोग भी मिटते हैं। त्राटक एवं सर्वांगासन से भी नेत्रज्योति में वृद्धि होती है। त्रिफलाघृत, त्रिफलाचूर्ण तथा सप्तामृत लोह नामक औषधियों का सेवन करें एवं त्रिफला के जल से हर रोज सुबह आँखें धोवें ।

प्रश्न : सदैव स्वस्थ बने रहने के लिये मनुष्य को क्या करना चाहिये ?

उत्तर : सदैव स्वस्थ बने रहने के लिये मनुष्य को सूर्योदय से पूर्व उठकर स्नानादि से निवृत्त होकर ध्यान, भजन, संध्या, आसन, प्राणायाम आदि करना चाहिये। दैनिक जीवन में अशुद्ध आहार-विहार से बचकर संयम, सादगी से रहते हुए सत्पुरुषों का सत्संग करना चाहिये । बुद्धिपूर्वक, व्यवस्थित एवं नियमित जीवन जीने से तन और मन दोनों स्वस्थ रहते हैं ।

प्रश्न : मेरी यादशक्ति बहुत कमजोर है, क्या करूँ ?

उत्तर : यादशक्तिवृद्धि के लिये नियमित आसन, प्राणायाम व त्राटक करें । प्रात:काल खाली पेट तुलसी के पाँच पत्ते चबा-चबाकर खावें तथा चाय, काफी न पीवें । दूध के साथ ब्राह्मी व शंखावली का सेवन करें ।

प्रश्न : कृपया मोटापा कम करने का उचित उपचार बतलाइये ।

उत्तर : सादा एवं अल्पाहार का सेवन करें । भोजन में मूँग, मोंठ, हरी सब्जी एवं सलाद का सेवन अधिक करें । भूख लगने पर परमल, खाखरा आदि से भूख मिटावें । नियमित आसन करें जिसमें नौकासन, उत्तानहस्तपाद आसन का विशेष अभ्यास करें । पेट की चर्बी कम करने में यह अति लाभप्रद आसन है । प्रतिदिन प्रात:काल ५ कि.मी. पैदल भ्रमण करें तथा आरोग्यवर्धिनीवटी नं.१, अमृताचूर्ण, त्रिफला एवं आंवलाचूर्ण आदि औषधियों का सेवन करें ।

प्रश्न : अल्पायु में ही मेरे बाल सफेद होकर झड़ने लगे हैं । कृपया कोई उपचार बतावें ।

उत्तर : अल्पायु में सफेद बालों के लिये हाथीदाँत, आंवला एवं भृंगराज का तेल बनाकर सिर में डालें तथा पाँव के तलवों में घी की मालिश करें । घी गरम करके उसकी कुछ बूँदें नाक में टपकावें तथा दिन में दो बार त्रिफलाचूर्ण, यष्टिचूर्ण के साथ लेवें । भोजन के बाद एक गिलास कुनकुने पानी में एक चम्मच घी डालकर पीवें तथा सर्वांगासन व जलनेति करें । ऐलोपैथी दवाइयों के सेवन से बचें ।

प्रश्न : मुझे अक्सर हल्का बुखार, थकान, अरुचि, आलस्य बना रहता है । मैं क्या करूँ ?

उत्तर : आप सुबह-शाम दो-दो संशमनीवटी अथवा गिलोय का रस या अमृताचूर्ण आराम न होने तक नियमित लेवें । ७-८ कड़वे नीम के पत्ते तथा १०-१२ तुलसी के पत्ते भी प्रतिदिन प्रात:काल चबाकर खाने से बुखार में राहत होती है ।

वर्षा ऋतु में आहार-विहार

इस मौसम में जठराग्नि मन्द रहती है अत: सादा, सरलता से पचने वाला एवं हल्का भोजन ही करना चाहिये । श्रावण मास में दूध तथा भादों में दही का सेवन नहीं करना चाहिये । हो सके तो केवल एक समय ही भोजन करें । भोजन में मूँग अथवा मूँगदाल का अधिक सेवन करें । मिर्च-मसाला, तले हुए गरिष्ठ पदार्थों, मिठाई आदि भारी तथा चिकनाई युक्त पदार्थों का अधिक सेवन इस मौसम में स्वास्थ्य के लिये हितकर नहीं है । शाम का भोजन इन दिनों में जल्दी कर लेना चाहिये तथा दिवस में सोना, रात्रि में देर तक जागना, हर कहीं का पानी पी लेना, अधिक परिश्रम या अति भोग इस ऋतु में निषिद्ध है । वर्षाकाल में सर्वत्र गन्दगी व्याप्त रहती है इसी कारण होटलों व भोजनालयों में नाश्ता, भोजन आदि करने से भी बचना चाहिये । खान-पान के मामले में घर में भी शुद्धता एवं पवित्रता रखनी चाहिये । हो सके तो पानी उबालकर ठंडाकर फिर ही पीवें अथवा मोटे डबल कपड़े से छानकर फिटकरी एवं तुलसी के पत्ते डालकर ही पीने के उपयोग में लावें । जठराग्नि प्रबल करने के लिये इस मौसम में भोजन के पूर्व अदरक का एक टुकड़ा नमक लगाकर खा लेवें तथा भोजन के पश्चात नींबू पर काली मिर्च का चूर्ण व हल्दी डालकर चूसें । प्रात:काल खाली पेट हरड़े तथा सोंठ का समभाग चूर्ण खाना भी इस मौसम में अत्यधिक लाभप्रद माना गया है ।

जठराग्नि प्रबल करने के लिये इस मौसम में भोजन के पूर्व अदरक का एक टुकड़ा नमक लगाकर खा लेवें तथा भोजन के पश्चात नींबू पर काली मिर्च का चूर्ण व हल्दी डालकर चूसें ।

बुखार में दूध पीना साँप के जहर के समान है, ऐसा चरक ऋषि ने कहा है ।

शरीर को अधिक देर तक गीला न रखें । यदि कहीं से भीगकर आये हैं तो तुरन्त ही कपड़े बदल लें । इस मौसम में बुखार आने पर सीधे डॉक्टर के पास न पहुँचें । अदरक, तुलसी, गुड़ व कालीमिर्च का काढ़ा बनाकर थोड़ा ठंडा होने पर नींबू का रस डालकर पीवें तथा पाँव के तलवों पर घी की मालिश करें । यह पेरासेटामल से भी अधिक सफल व गुणकारी प्रयोग है । सिर एवं नाभि पर बर्फ के ठंडे पानी की पट्टियाँ रखें । जब तक बुखार खत्म न हो जावे तब तक कुछ भी न खावें । बुखार में दूध पीना साँप के जहर के समान है, ऐसा चरक ऋषि ने कहा है । बुखार खत्म होने के बाद कड़वी औषधि, जैसे किरातादि क्वाथ, पीवें या मामेज्वाघनवटी अथवा सुदर्शनघनवटी का सेवन करें । ऐलोपैथी के इन्जेक्शन व गोलियाँ खाने से लीवर व पेट खराब होते हैं तथा अन्य रोगों की भी वृद्धि होती है, अत: इनसे बचना चाहिये ।

श्रावण से कार्तिक मास तक का समय साधना के लिये सर्वोत्तम माना जाता है अत: इस चतुर्मास में संयम, सादगी व सदाचार का पालन करते हुए गुरुमंत्र का अनुष्ठान, गुरुगीता का पाठ तथा योगवाशिष्ठ महारामायण, श्रीमद्भागवत, भगवद्गीता, रामायण आदि धर्मग्रन्थों का नियमित स्वाध्याय करना चाहिये ।

स्वास्थ्य प्रश्नोत्तरी में आप भी सम्मिलित हो सकते हैं । आपका नाम, पता गुप्त रखा जाएगा । अपने रोग संबंधी जानकारी इस पते पर भेजें : स्वास्थ्य प्रश्नोत्तरी, ऋषि प्रसाद, संत श्री आसारामजी आश्रम, साबरमती, अहमदाबाद-३८० ००५.

जहाँ गुरुकृपा है वहाँ योग्य व्यवहार है और जहाँ योग्य व्यवहार है वहाँ रिद्धि-सिद्धि और अमरता है ।

- स्वामी शिवानंदजी

संस्था समाचार

इन्दौर : दिनांक ७ जुलाई से १० जुलाई तक इन्दौर आश्रम में पूज्य गुरुदेव के पावन सान्निध्य में गुरुपूर्णिमा महोत्सव के निमित्त सत्संग प्रवचनों का भव्य आयोजन हुआ तथा दिनांक ११ जुलाई को यहाँ भी गुरुपूर्णिमा का आयोजन किया गया जिसमें लाखों लोगों ने गुरुदर्शन का लाभ लिया । तीस वर्षों में यह पहला अवसर था जब पूज्य बापू ने अहमदाबाद के अतिरिक्त अन्यत्र भी कहीं अपनी प्रत्यक्ष उपस्थिति में गुरुपूर्णिमा महोत्सव के आयोजन की स्वीकृति प्रदान की थी । मालवावासियों ने इस अवसर का भरपूर लाभ लिया ।

अहमदाबाद : दिनांक १२ जुलाई को पूज्य गुरुदेव के पावन सान्निध्य में अहमदाबाद आश्रम में गुरुपूर्णिमा उत्सव मनाया गया । इस वर्ष गत वर्ष से भी अधिक दर्शनार्थी गुरुभक्तों की भीड़ गुरुदर्शन को उमड़ी थी । शाम के छः बजे तक भी गुरुभक्तों की लम्बी कतार गुरुदर्शन के लिये लगी हुई थी । भाइयों की कतार गुजरात स्टेडियम तक तथा बहनों की कतार मोटेरा ग्राम तक पहुँच गई थी फिर भी किसी के चेहरे पर शिकवा शिकन नहीं देखा गया । सभी स्वस्वीकृत अनुशासन में शांत भाव से कभी धूप तो कभी वर्षा की फुहारों को सहते हुए भी गुरुदर्शन का आनन्द ले रहे थे । देर रात तक गुरुदर्शन का सिलसिला चलता रहा । दिनांक १५ जुलाई १९९५ तक गुरुभक्तों ने यहाँ पूज्यश्री के पावन वचनामृत का लाभ लिया ।

यु. एस. ए. : दिनांक १६ जुलाई को तड़के ३.४५ बजे पूज्यश्री एयर इंडिया के विमान से अमेरिका की ओर रवाना हुए ।

पूज्य गुरुदेव के पावन सान्निध्य में दिनांक २१ से २३ जुलाई तक न्यू जर्सी (अमेरिका) में, दिनांक २८ से ३१ जुलाई तक टोरेन्टो (केनेडा) में, दिनांक ५ और ६ अगस्त शिकागो (अमेरिका) तथा १२ और १३ अगस्त लंदन में सुप्रवचन आयोजित हुए हैं ।

आगरा : यहाँ नवनिर्मित संत श्री आसारामजी आश्रम में पूज्य बापू के कृपापात्र साधक शिष्य स्वामी सुरेशानंदजी के सान्निध्य में गुरुपूर्णिमा महोत्सव पर तीन दिवसीय सत्संग का आयोजन किया गया जिसमें हजारों गुरुभक्तों ने भाग लिया । दिनांक १२ जुलाई को पूज्य गुरुदेव का यहाँ दूरभाष सत्संग भी प्राप्त हुआ ।

इसके अतिरिक्त देशभर के विभिन्न आश्रमों एवं योग वेदान्त सेवा समितियों की शाखाओं ने स्थानीय स्तर पर गुरुपूर्णिमा महोत्सव के अवसर पर गुरुपादुका-पूजन का आयोजन किया ।

चिकित्सा सुविधा : सूरत आश्रम के वैद्यराज अब प्रत्येक माह के पहले व तीसरे बुधवार को अहमदाबाद आश्रम के धन्वंतरि आरोग्य केन्द्र में भी उपचारार्थ मिलेंगे ।

पू.बापू के आगामी सत्संग कार्यक्रम

सूरत आश्रम में जन्माष्टमी महोत्सव

दिनांक : १८ अगस्त १९९५
स्थान : संत श्री आसारामजी आश्रम, वरीयाव रोड़, जहाँगीरपुरा, सूरत (गुजरात) फोन : ६८५३४१

पानीपत (हरियाणा) में गीता भागवत सत्संग समारोह

दिनांक : ६ से १० सितम्बर १९९५
समय : सुबह ९ से ११ शाम ४ से ६
स्थान : हुड्डा काम्प्लेक्ष, फेस टु, पानीपत ।

कानपुर (उ.प्र.) में गीता भागवत सत्संग समारोह

दिनांक : १३ से १७ सितम्बर १९९५

Registered With Registrar of Newspapers for India Under No. 48873/91 L2/131/GAMC/1132/95-96 PSO Ahmedabad.